निर्धन परिवार के बच्चों में पोषक तत्त्वों की कमी से होने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ. सुनीला कुमारी*

सार–संक्षेप–बच्चों के देखभाल, पोषण, स्वास्थ्य तथा शिक्षा को बढ़ावा देने में पारिवारिक स्थिति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बालक एवं बालिकाओं के समग्र विकास में 6–12 वर्ष की अवस्था एक महत्वपूर्ण अवस्था है जो कि उनके वृद्धि एवं विकास को प्रभावित करती है। अतः यह मान लिया जाता है कि यदि 6–12 वर्ष की बालक–बालिकाएँ स्वस्थ तथा पोषणात्मक कमियों से मुक्त होगा तो वे भविष्य में राष्ट्र के विकास में अहम भूमिका निभा सकती है। साथ ही साथ परिवार तथा समाज का भी बेहतर विकास तथा कल्याण कर पाएगा। 6–12 वर्ष के बालक–बालिकाएँ पोषणात्मक कमियों की शिकार होता हैं तो भविष्य में वे स्वस्थ नहीं रह पाएगा। इस तरह देश और समाज दोनों ही पिछड़ा और अविकसित होगा। अतः यह भी महत्वपूर्ण है कि बालक–बालिकाओं स्वस्थ, विकसित तथा पोषणात्मक कमियों से मुक्त हों ताकि हमारा परिवार, समाज तथा राष्ट्र विकास की धारा से जुड़ सके ताकि पूरे समाज का सर्वांगीण विकास हो सके तथा किशोरियाँ राष्ट्र के सर्वांगीण विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सके।

परिचय–निर्धनता के कारण गरीब परिवार के बच्चों को संतुलित आहार नहीं मिल पाता है जिसके कारण वे विभिन्न प्रकार के रोगों के चपेट में आ जाते है। निर्धन परिवार के बच्चों को उचित पोषण के अभाव में विभिन्न प्रकार के शारीरिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। साथ ही कई शारीरिक परिवर्तन होते हैं और रोगों से लड़ने की शक्ति भी क्षीण हो जाती है। जिसके कारण पौष्टिक आहार की आवश्यकता अधिक या कम हो सकती है। कुपोषण के कारण शरीर में पानी की मात्रा कम हो जाती है और वसा का प्रतिशत बढ़ जाता है। शरीर की सक्रिय कोशिकाओं की संख्या में कमी होने लगती है। इस प्रकार के परिवर्तन विशेष रूप से उत्तकों में दिखाई पड़ते हैं। पोषण के अभाव में मस्तिष्क, हड्डियों, हृदय, गुर्दे और ढांचे की मांसपेशियों में नए उत्तक उत्पन्न करने की शक्ति क्षीण हो जाती है। सक्रिय कोशिकाओं के स्थान पर वसा और मांसपेशियों को जोड़ने वाले उत्तक बन जाता है। उचित पोषण के अभाव में अंगों की क्रियाशीलता घट जाती है।

किशोरावस्था तक पहुँचते–पहुँचते बालक शारीरिक वृद्धि मानसिक विकास तथा संवेगात्मक विशेषताओं तथा अभिरूचियों से भी प्रभावित होने लगता है। बालक अक्सर तनाव ग्रस्त रहने लगता है। उसे तनाव से मुक्ति पाने तथा परिवार के सदस्यों एवं अपने साथियों के साथ समायोजन स्थापित करने में उसकी बहुत सी उर्जा खर्च हो जाती है। इस कारण बाल्यावस्था में अधिक पौष्टिक भोज्य पदार्थों की जरूरत होती है। यदि इस उम्र में बालका को पूर्ण पौष्टिक आहार नहीं दिया जाए तो उसके शारीरिक, मानसिक, शैक्षिक, खेल एवं संवेगात्मक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं। अतः इस उम्र के बालकों को उचित एवं पौष्टिक भोजन पर माताओं को अधिक ध्यान देना चाहिए।

बाल्यावस्था या उत्तर बाल्यावस्था में बालकों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है। साथ ही आत्मनिर्भरता भी बढ़ जाती है। वे अपना हर कार्य स्वयं ही शीघ्रता से निपटाना चाहते है तथा वे नहीं चाहते है कि इसमें दूसरों का हस्तक्षेप हो। वे विभिन्न क्रियाएँ जैसे– भोजन करना, वस्त्र पहनना, स्नान करना, अपने वस्तुओं को यथास्थान रखना आदि कार्य स्वयं ही करने लगते है। विद्यालयी बालक स्वयं के प्रति अत्यन्त ही लापरवाह होते है। विशेषकर भोजन पर तो बिल्कुल ही समय व्यतीत नहीं करना चाहते है नाश्ते को तो छोड़ ही देते है। खेलने में बालक इतने अधिक व्यस्त हो जाते है कि वे विद्यालय में अपना लंच बॉक्स तक नहीं खोल पाते है।

आज के बच्चों के समक्ष अनेक चुनौतियाँ हैं, कई तरह के दबाव भी हैं, जिससे वे अक्सर कुण्ठित होकर अनेक असामान्य व्यवहार करते हैं। बच्चे के सम्पूर्ण विकास में परिवार और समाज का पूर्ण उत्तरदायित्व होता है। बालक किसी भी राष्ट्र की नींव होते हैं। आधुनिक समाज में बालक एवं किशोर का स्थान महत्वपूर्ण है, क्योंकि किसी भी देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग बालकों एवं किशोरों द्वारा निर्मित होता है। बाल्यकाल मानव जीवन की अपरिपक्वता की अवस्था होती है, इस अवस्था में बालक की स्थिति कुम्हार के उस कच्चे घड़े के समान होती है, जिसे वह कुशल हाथों, से संवार कर कलात्मक एवं आकर्षक रूप दे सकता है या फिर अपने फूहड़ हाथों से भद्दी आकृति में भी परिवर्तित कर सकता है। शिशु किसी आदत को लेकर जन्म नहीं लेता। वह तो अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तथा इस जटिल एवं नवीन वातावरण से सामंजस्य स्थापित करने के लिए कुछ क्रियाएं करता है, यही प्रारम्भिक क्रियाएँ उत्तरोत्तर उनके विकास का आधार बनती जाती हैं। एडलर का मानना है कि, ''व्यक्ति के संपूर्ण जीवन के मूल ढांचे का निर्माण शैशवास्था में ही हो जाता है।'' हरलॉक के अनुसार, ''शिशु का मस्तिष्क एक कोरी स्लेट के समान होता है, आप जो चाहें इस पर लिख सकते हैं।'' यह स्पष्ट हो जाता है कि किशोरावस्था ही जीवन की धुरी है तथा यह सम्पूर्ण जीवन काल की सबसे संवेदनशील अवस्था है।

बच्चे आदर्शों और नैतिक मूल्यों के द्वारा उचित व्यवहार करते हैं या नहीं? संपूर्ण विकास हेतु अनुकरण, पुरस्कार, दंड, प्रेरणा आदि का व्यक्तित्व विकास में योगदान है, जो मानव विकास से सम्बद्ध है। मानव विकास के अन्तर्गत मानव जीवन की सम्पूर्ण अवधि का अध्ययन किया जाता है, इसमें मानव का अध्ययन

पिता–चन्देश्वर ठाकुर महाराजगंज, वार्ड–13 हनुमान मंदिर के नजदीक मधुबनी (बिहार)

गर्भाधान से मृत्यु तक किया जाता है। सम्पूर्ण जीवन अवधि की विभिन्न अवस्थाओं में वृद्धि विकास एवं क्षय होने की समस्त प्रक्रियाओं का अध्ययन मानव विकास की अध्ययन वस्तु है।

हमारी संस्कृति महत्वपूर्ण, अर्थपूर्ण तथा अध्ययन करने योग्य है। समाज की उन्नति और व्यवहार के विकास का ज्ञान, युवा एवं बच्चे को प्रथमतः समाज द्वारा निर्धारित लक्ष्य एवं उद्देश्य तक पहुँचने में सहायता प्रदान करते हैं। बालक लघुव्यस्क होता है तथा बच्चों के लिए नैतिक जिम्मेदारियाँ पहले से ही निर्धारित कर दी जाती हैं और इस प्रकार उसे अनुभव एवं परिपक्वता द्वारा सीखकर अपने परम्परागत मानक स्थापित करने के अवसर नहीं मिल पाते हैं। बालक की दुनिया समझ लेने से हम व्यस्क की दुनिया को अधिक स्पष्ट रूप से जान या समझ सकते हैं।

मानव विकास का अध्ययन व्यवहार की व्याख्या पर केन्द्रित है इस क्रम में यह आयु के नियमों एवं सिद्धान्तों का अनुसंधान करता है। मानव विकास आयु के अनुसार व्यक्ति के व्यवहार की खोज एवं व्याख्या करता है। मानव विकास का क्षेत्र वैज्ञानिक शोधों की वह शाखा है जो मानव का गर्भाधान से मृत्यु तक वैज्ञानिक अध्ययन करता है। गर्भावस्था से मृत्यु संपूर्ण जीवन अवधि में होने वाले विकास तथा व्यवहार के यह परिवर्तन मात्रात्मक, शारीरिक वृद्धि, विकास एवं गुणात्मक अमूर्त विचारधारा में समाहित होते हैं।

किशोरावस्था अत्यन्त जिज्ञासु अवस्था होती है। इस अवस्था के बच्चे हर स्थिति की वास्तविकता जानना चाहते हैं। आज के इस भौतिकतावादी प्रतिस्पर्धा के युग में सामाजिक व्यवस्था में निरंतर नवीन परिवर्तन एवं पारस्परिक संबंधों के प्रति विचारों में परिवर्तन आ रहा है। परिवार एवं समाज की बालक/बालिकाओं से अपेक्षायें बढ़ती जा रही है। स्थिति यह है कि बालक जब इन अपेक्षाओं को पूर्ण करने में स्वयं को असमर्थ पाता है तो उसमें चिड़चिड़ापन, उपेक्षा, घृणा एवं व्यक्तित्व विघटन जैसी मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न होने लगती हैं, फलस्वरूप बालक संवेगात्मक रूप से परिपक्व नहीं हो पाता और इस स्थिति से उत्पन्न परिणाम बालक को समाज से समायोजित होने में अवरोध उत्पन्न करते हैं।

सामाजीकरण के लिए बालक को पर्याप्त अवसर मिलना नितांत आवश्यक है। उसकी परिपक्वता उसका सामाजिक समायोजन करने में सहयोगी होगी। किशोरावस्था में दूसरों के संवेगों को समझने और आत्मसात करने की क्षमता आ जाती है। बालक जीवन में प्रसन्नता और सुख की अनुभूति करता है। यह आयु हंसने, मुस्कराने तथा दूसरों के साथ प्रेम करने की समर्थता उत्पन्न करती है। परिस्थिति के अनुरूप बालक अपने संवेगों की अभिव्यक्ति करना सीख जाता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन का महत्व इस तथ्य में निहित है कि किशोरावस्था के संवेगों और सामाजिक समायोजन की क्षमता का अध्ययन कर, बालकों को उचित निर्देशन एवं मार्गदर्शन प्रदान किया जा सकें। बालक अपने संवेगों की परिपक्वता के साथ

सरल सामाजिक समायोजन कर सफल जीवन व्यतीत करता है, तो निश्चित इस अध्ययन की सार्थकता सिद्ध हो सकेगी।

अन्वेषण में आने वाले सभी घटकों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना अत्यंत आवश्यक होता है। एलमर महोदय का कथन है कि, जहाँ तक संभव हो इकाई को समस्त विरोधी या परिवर्तनीय तत्वों से स्वतंत्र रखना चाहिए। अतः अध्ययन के अन्तर्गत प्रयुक्त समस्त प्रत्ययों का स्पष्टीकरण आवश्यक है। शोधकर्ता अथवा अन्य संबंधित व्यक्ति अध्ययन के किसी चरण में किसी भ्रान्त धारणा से ग्रसित न हो पायें इस उद्देश्य से शोध में प्रयुक्त कुछ शब्दों को निम्न रूप से परिभाषित किया गया है।

विकास का तात्पर्य गर्भावस्था से लेकर मृत्यु तक किसी निश्चित लक्ष्य की ओर होने वाले उन निरन्तर परिवर्तनों से है जो व्यवस्थित तथा 'समानुगत' और प्रगतिशील क्रम रूप से होते हैं। हरलॉक के अनुसार विकास बढ़ने तक ही सीमित नही है। व्यवस्थित तथा समानुगत प्रगतिशील क्रम है जो परिपक्वता की प्राप्ति में सहायक होता है। ड्रेवर, विकास प्राणी में प्रगतिशील परिर्वन है जो किसी निश्चित लक्ष्य की ओर लगातार निर्देशित होता है। इंगलिश और इंगलिश विकास प्राणी की शरीर अवस्था में एक लम्बे अर्से तक होने वाले लगातार परिवर्तन का एक क्रम है। यह विशेषतः ऐसा परिवर्तन है जिसके कारण जन्म से लेकर परिपक्वता और मृत्यु तक प्राणी में स्थायी परिवर्तन होते हैं।

निष्कर्ष–भारत में किए गए आहार एवं पोषण सर्वेक्षणों से यह निष्कर्ष निकलता है कि निर्धनता के कारण गरीब परिवार के अधिकांश बच्चे तथा किशोर अपर्याप्त भोजन ग्रहण करते है जिसके कारण उनका शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास प्रभावित होता है। परिणामतः उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है और वे कुपोषण के शिकार हो जाते है। गरीबी अज्ञानता एवं अंधविश्वास अपर्याप्त खाद्य पदार्थो का उत्पादन भोज्य पदार्थो का असमान वितरण, संक्रमण, पोषण संबंधी शिक्षा का अभाव आदि कुपोषण के कारण हैं।

संदर्भ सूची

1. भावना सवरवाल, 2017, इनसाइक्लोपेडिया ऑफ फुड न्यूट्रीशन डायरेटिस एण्ड हेल्थ, कॉमनवेल्थ पब्लिकेशन, पृ. 84
2. तारा गोपाल दास एण्ड सुभद्रा शास्त्री, 2015, न्यूट्रीशन मोनिटरिंग एण्ड एशोसममेंट स्पेथेच पब्लिसर न्यू देल्ही, पृ. 105
3. आर. नाथ, 2012, हेल्थ ण्ड डिजिज रूल ऑफ माइक्रो न्यूट्रीशन एण्ड ट्रेस इलिमेंन्टस, ए. पी. पब्लिसिंग, न्यू देल्ही, पृ. 97–98.
4. गीता पुष्प शॉ, जॉयस शीला शॉ, 2008, व्यवहारिक आहार विज्ञान एवं आरार चिकित्सा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–2, पृ. 10.
5. आर. कुमार, 2008, चाइल्ड डेभलपमेंट इन इंडिया, आशीष पब्लिसिंग नई दिल्ली, पृ. 157.